जैन साधना में सद्गुरु का महत्त्व

प्रोफेसर पुष्पलता जैन

जैन सन्तों एवं कवियों ने विशाल वाङ्मय की रचना की है। भक्तिकाल में कुशललाभ, मानसिंह, बनारसीदास, द्यानतराय, सहजकीर्ति, पांडे हेमराज, रूपचन्द, आनन्दघन, दौलतराम, भूधरदास, बुधजन, समयसुन्दर आदि अनेक जैन कवियों ने अपने काव्यों में गुरु-गुणगान भी किया है। उसे ही प्रस्तुत आलेख में प्रो. पुष्पलता जैन ने संयोजित किया है। **-सम्पादक**

परमात्म-पद की प्राप्ति के लिए साधना एक अपरिहार्य तत्त्व है। जैन-जैनेतर साधकों ने अपने-अपने ढंग से उसकी आराधना की है। यहाँ हम हिन्दी जैन साहित्य के आधार पर जैन साधना में सद्गुरु की कितनी आवश्यकता होती है, इस तथ्य पर प्रकाश डालेंगे।

जैन साधना में सद्गुरु प्राप्ति का विशेष महत्त्व है। साधना में सद्गुरु का स्थान वही है जो अर्हन्त का है। जैन साधकों ने अर्हन्त-तीर्थंकर, आचार्य, उपाध्याय और साधु को सद्गुरु मानकर उनकी उपासना, स्तुति और भक्ति की है।[1] मोहादिक कर्मों के बने रहने के कारण वह 'बड़े भागनि' से हो पाती है।[2] कुशललाभ ने गुरु श्री पूज्यवाहण के उपदेशों को कोकिल-कामिनी के गीतों में, मयूरों की थिरकन में और चकोरों के पुलकित नयनों में देखा। उनके ध्यान में स्नान करते ही शीतल पवन की लहरें चलने लगती हैं सकल जगत् सुपथ की सुगन्ध से महकने लगता है, सातों क्षेत्र सुधर्म से आपूर हो जाता है। ऐसे गुरु के प्रसाद की उपलब्धि यदि हो सके तो शाश्वत सुख प्राप्त होने में कोई बाधा नहीं होगी-

'सदा गुरु ध्यान स्नानलहरि शीतल वहइ रे।
कीर्ति सुजस विसाल सकल जग मह महइ रे।
साते क्षेत्र सुठाम सुधर्मह नीपजई रे।
श्री गुरु पाय प्रसाद सदा सुख संपजइ रे।।[3]

मानसिंह ने क्षुल्लक कुमार चौपइ (सं. 1670) में सद्गुरु की संगति को मोक्षप्राप्ति का कारण माना है। उनका कहना है-

श्री सद्गुरु पद जुग नमी, सरसति ध्यान धरेसु,
क्षुल्लक कुमार सुसाधुना, गुण संग्रहण करेशु।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

गुणग्रहतां गुण पाइयइ, गुणि रंजइ गुणजाण,
कमलि भ्रमर आवइ चतुर, दादुर ग्रह इन अजाण।
गुणिजन संगत थइ निपुण, पावइ उत्तम ठाम,
कुसुमसंग डोरो कंटक केतकि सिरि अभिराम।
पहिलउ धर्म न संग्रहिउ, मात कहिइ गुरुवयण,
नट्ठइवयणे जागीयइ, विकसे अंतरनयण।

सोमप्रभाचार्य के भावों का अनुकरण कर बनारसीदास ने भी गुरु सेवा को 'पायपंथ परिहरहिं धरहिं शुभपंथ पग' तथा 'सदा अवांछित चित्त जुतारन तरन जग' माना है। सद्गुरु की कृपा से मिथ्यात्व का विनाश होता है। सुगति-दुर्गति के विधायक कर्मों के विधि-निषेध का ज्ञान होता है, पुण्य-पाप का अर्थ समझ में आता है, संसार-सागर को पार करने के लिए सद्गुरु वस्तुतः एक जहाज है। उसकी समानता संसार में और कोई भी नहीं कर सकता -

मिथ्यात्व दलन सिद्धान्त साधक, मुकतिमारग जानिये।
करनी अकरनी सुगति दुर्गति, पुण्य पाप बखानिये।
संसारसागर तरन तारन, गुरु जहाज विशेखिये।
जगमांहि गुरुसम कह 'बनारसि', और कोउ न पेखिये।।[4]

कवि का गुरु अनन्तगुणी, निराबाधी, रूपाधि, अविनाशी, चिदानंदमय और ब्रह्मसमाधिमय है। उनका ज्ञान दिन में सूर्य का प्रकाश और रात्रि में चन्द्र का प्रकाश है। इसलिए हे प्राणी, चेतो और गुरु की अमृत रूप तथा निश्चय-व्यवहारनय रूप वाणी को सुनो। मर्मी व्यक्ति ही मर्म को जान पाता है।[5] गुरु की वाणी को ही उन्होंने जिनागम कहा और उसकी ही शुभधर्मप्रकाशक, पापविनाश, कुनयभेदक, तृष्णानाशक आदि रूप से स्तुति की।[6] जिस प्रकार से अंजन रूप औषधि के लगाने से तिमिर रोग नष्ट हो जाते हैं वैसे ही सद्गुरु के उपदेश से संशयादि दोष विनष्ट हो जाते हैं।[7] शिव पच्चीसी में गुरु वाणी को 'जलहरी' कहा है।[8] उसे सुमति और शारदा कहकर कवि ने सुमति देव्यष्टोत्तर शतानाम तथा शारदाष्टक लिखा है जिनमें गुरुवाणी को 'सुधाधर्म, संसाधनी धर्मशाला, सुधातापनि नाशनी मेघमाला। महामोह विध्वंसनी मोक्षदानी' कहकर 'नामोदेवि वागेश्वरी जैनवानी' आदि रूप से स्तुति की है।[9] केवलज्ञानी सद्गुरु के हृदय रूप सरोवर से नदी रूप जिनवाणी निकलकर शास्त्र रूप समुद्र में प्रविष्ट हो गई। इसलिए वह सत्य स्वरूप और अनन्तनयात्मक हैं।[10] कवि ने उसकी मेघ से उपमा देकर सम्पूर्ण जगत के लिए हितकारिणी माना है।[11] उसे सम्यग्दृष्टि समझते हैं और मिथ्यादृष्टि नहीं समझ पाते। इस तथ्य को कवि ने अनेक प्रकार से समझाया है जिस प्रकार निर्वाण साध्य है और अरहंत, श्रावक, साधु, सम्यक्त्व आदि

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अवस्थायें साधक हैं, इनमें प्रत्यक्ष-परोक्ष का भेद है। ये सब अवस्थायें एक जीव की हैं। ऐसा जानने वाला ही सम्यग्दृष्टि होता है।[12]

सहजकीर्ति गुरु के दर्शन को परमानन्ददायी मानते हैं- 'दरशन अधिक आणंद जंगम सुर तरुकंद।' उनके गुण अवर्णनीय हैं- 'वरणवी हूँ नवि सकूं'।[13] जगतराम ध्यानस्थ होकर अलख निरंजन को जगाने वाले सद्गुरु पर बलिहारी हो जाता है।[14] और फिर सद्गुरु के प्रति 'ता जोगी चित लावो मोरे वालो' कहकर अपना अनुराग प्रगट किया है।[15] वह शील रूप लंगोटी में संयम रूप डोरी से गाँठ लगाता है, क्षमा और करुणा का नाद बजाता है तथा ज्ञान रूप गुफा में दीपक संजोकर चेतन को जगाता है। कहता है, रे चेतन, तुम ज्ञानी हो और समझाने वाला सद्गुरु है तब भी तुम्हारे समझ में नहीं आता, यह आश्चर्य का विषय है।

सद्गुरु तुमहिं पढ़ावै चित दै अरु तुमहू हौ ज्ञानी, तबहूं तुमहिं न क्यों हू आवै, चेतन तत्त्व कहानी।[16]

पांडे हेमराज का गुरु दीपक के समान प्रकाश करने वाला है तथा वह तमनाशक और वैरागी है।[17] उसे आश्चर्य है कि ऐसे गुरु के वचनों को भी जीव न तो सुनता है और न विषयवासना तथा पापादिक कर्मों से दूर होता है।[18] इसलिए वह कह उठता है-सीष सगुरु की मानि लै रै लाल।[19]

रूपचन्द की दृष्टि में गुरु-कृपा के बिना भवसागर से पार नहीं हुआ जा सकता।[20] ब्रह्मदीप उसकी ज्योति में अपनी ज्योति मिलाने के लिए आतुर दिखाई देते हैं- 'कहै ब्रह्मदीप सजन सुमझाई करि जोति में जोति मिलावै।[21]

ब्रह्मदीप के समान ही आनंदघन ने भी 'अबधू' के सम्बोधन से योगी गुरु के स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है।[22] भैया भगवतीदास ने ऐसे ही योगी सद्गुरु के वचनामृत द्वारा संसारी जीवों को सचेत हो जाने के लिए आह्वान किया है-

एतो दुःख संसार में, एतो सुख सब जान।
इति लखि भैया चैतिये, सुगुरुवचन उर आन।।[23]

मधुबिन्दुक की चौपाई में उन्होंने अन्य रहस्यवादी सन्तों के समान गुरु के महत्त्व को स्वीकार किया है। उनका विश्वास है कि सद्गुरु के मार्गदर्शन के बिना जीव का कल्याण नहीं हो सकता, पर वीतरागी सद्गुरु भी आसानी से नहीं मिलता, पुण्य के उदय से ही ऐसा सद्गुरु मिलता है-

'सुअटा सोचै हिए मझार। ये गुरु सांचे तारनहार।।
मैं शठ फिरयोकरम वन मांहि। ऐसे गुरु कहूं पाए नाहिं।
अब मो पुण्य उदय कुछ भयौ। सांचे गुरु को दर्शन लयो।।[24]

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

पांडे रूपचन्द गीत परमार्थी में आत्मा को सम्बोधते हुए सद्गुरु के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि सद्गुरु अमृतमय तथा हितकारी वचनों से चेतन को समझाता है-

चेतन, अचरज भारी, यह मेरे जिय आवै।
अमृत वचन हितकारी, सद्गुरु तुमहिं पढ़ावै।
सद्गुरु तुमहिं पढ़ावै चित दै, अरु तुमहू हौ ग्यानी।
तबहूं तुमहिं न क्यों हू आवै, चेतन तत्त्व कहानी।।[25]

दौलतराम जैन गुरु का स्वरूप स्पष्ट करते हुए चिंतित दिखाई देते हैं कि उन्हें वैसा गुरु कब मिलेगा जो कंचन-कांच में व निंदक-वंदक में समताभावी हो, वीतरागी हो, दुर्धर तपस्वी हो, अपरिग्रही हो, संयमी हो। ऐसे ही गुरु भवसागर से पार करा सकते हैं-

कब हौं मिलैं मोहि श्री गुरु मुनिवर करि हैं भवोदधि पारा हो।
भोग उदास जोग जिन लीन्हों छाड़ि परिग्रह मारा हो।।
कंचन-कांच बराकर जिनके, निदंक-बंधक सारा हो।
दुर्धर तप तपि सम्यक् निजघर मन वचन कर धारा हो।।
ग्रीषम गिरि हिम सरिता तीरे पावस तरुतर ठारा हो।
करुणा मीन हीन त्रस थावर ईर्यापथ समारा हो।।
मास छमासउपास बासवन पासुक करत अहारा हो।
आरत रौद्र लेश नहिं जिनके धर्म शुक्ल चित धारा हो।।
ध्यानारूढ गूढ़ निज आतम शुद्ध उपयोग विचारा हो।
आप तरहि औरनि कौ तारहिं, भव जल सिन्धु अपारा हो।
दौलत ऐसे जैन जतिन को निजप्रति धोक हमारा हो।

(दौलत विलास, पद 72)

द्यानतराय को गुरु के समान और दूसरा कोई दाता दिखाई नहीं दिया। तदनुसार गुरु उस अन्धकार को नष्ट कर देता है जिसे सूर्य भी नष्ट नहीं कर पाता, मेघ के समान सभी पर समानभाव से निःस्वार्थ होकर कृपा जल वर्षाता है। नरक, तिर्यंच आदि गतियों से जीवों को लाकर स्वर्ग-मोक्ष में पहुँचाता है अतः त्रिभुवन में दीपक के समान प्रकाश करने वाला गुरु ही है। वह संसार-सागर से पार लगाने वाला जहाज है। विशुद्धमन से उसके पद-पंकज का स्मरण करना चाहिए।[26]

कवि विषयवासना में पगे जीवों को देखकर सहानुभूति पूर्वक कह उठता है-

जो तजै विषय की आसा, द्यानत पावै शिवासा।
यह सतगुरु सीख बनाई काहूं विरलै के जिय आई।।[27]

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

भूधरदास को भी श्री गुरु के उपदेश अनुपम लगते हैं इसलिए वे सम्बोधित कर कहते हैं- "सुन ज्ञानी प्राणी, श्री गुरु सीख सयानी"[28]। गुरु की यह सीख रूप गंगा नदी भगवान महावीर रूपी हिमाचल से निकली, मोह-रूपी महापर्वत को भेदती हुई आगे बढ़ी, जग को जड़ता रूपी आतप को दूर करते हुए ज्ञान रूप महासागर में गिरी, सप्तभंगी रूपी तरंगें उछलीं। उसको हमारा शतशः वन्दन। सद्गुरु की यह वाणी अज्ञानान्धकार को दूर करने वाली है।

बुधजन सद्गुरु की सीख को मान लेने का आग्रह करते हैं- "सुठिल्यौ जीव सुजान सीख गुरु हित की कही। रुल्यौ अनन्ती बार गति-गति सातान लही। (बुधजन विलास, पद 99), गुरु द्वारा प्रदत्त ज्ञान के प्याले से कवि बुधजन घोर जंगलों से दूर हो गयेः-

गुरु ने पिलाया जो ज्ञान प्याला।
यह बेखबरी परमावां की निजरस में मतवाला।
यों तो छाक जात नहिं छिनहूं मिटि गये आन जंजाल।
अद्भुत आनन्द मगन ध्यान में बुद्धजन हाल सम्हाला।।

-बुधजन विलास, पद 77

समयसुन्दर की दशा गुरु के दर्शन करते ही बदल जाती है और पुण्य दशा प्रकट हो जाती है- आज कू धन दिन मेर उ। पुण्यदशा प्रगटी अब मेरी पेखतु गुरु मुख तेरउ।। (ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह, पृ. 129) सन्त साधुकीर्ति तो गुरु दर्शन के बिना विह्वल से दिखाई देते हैं। इसलिए सखि से उनके आगमन का मार्ग पूछते हैं। उनकी व्याकुलता निर्गुण संतों की व्याकुलता से भी अधिक पवित्रता लिए हुए है (ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह, पृ. 91)

इस प्रकार सद्गुरु और उसकी दिव्यवाणी का महत्त्व रहस्य साधना की प्राप्ति के लिए आवश्यक है। सद्गुरु के प्रसाद से ही सरस्वती की प्राप्ति होती है (सिद्धान्त चौपाई, लावण्य, समय, 1.2) और उसी से एकाग्रता आती है (सारसिखामनरास, संवेग-सुन्दर उपाध्याय, बड़ा मन्दिर जयपुर की हस्तलिखित प्रति)। ब्रह्ममिलन के महापथ का दिग्दर्शन भी यही कराता है। परमात्मा से साक्षात्कार कराने में सद्गुरु का विशेष योगदान रहता है। माया का आच्छन्न आवरण उसी के उपदेश और सत्संगति से दूर हो पाता है। फलतः आत्मा परम विशुद्ध बन जाता है। उसी विशुद्ध आत्मा को पूज्यपाद ने निश्चय नय की दृष्टि से सद्गुरु कहा है- "नयत्यात्मात्मेव जन्म निर्वाणमेव च गुरुरात्मात्मनस्तस्मान्नान्योऽस्ति परमार्थतः"- समाधितन्त्र, 65

प्रायः सभी दार्शनिकों ने नरभव की दुर्लभता को स्वीकार किया है। यह सम्भवतः इसलिए भी होगा कि ज्ञान की जितनी अधिक गहराई तक मनुष्य पहुँच सकता है उतनी गहराई तक अन्य कोई नहीं। साथ ही यह भी तथ्य है कि जितना अधिक अज्ञान मनुष्य में हो सकता है उतना और दूसरे में नहीं। ज्ञान

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

और अज्ञान दोनों की प्रकर्षता यहाँ देखी जा सकती है। इसलिए आचार्यों ने मानव की शक्ति का उपयोग अज्ञान को दूर करने में लगाने के लिए प्रेरित किया है। यह प्रेरक सूत्र सद्गुरु ही होता है। सद्गुरु की ही सत्संगति से साधक नरभव की दुर्लभता को समझ पाता है और साधना के शिखर तक पहुँच जाता है। महावीर, बुद्ध आदि महापुरुषों को इसीलिए सद्गुरु कहा जाता है। आचार्य श्री हस्तीमल महाराज सा. भी ऐसे ही सद्गुरु रहे हैं जिनकी संगति से लोगों ने धर्म के अन्तस्तल को पहचाना है।

सद्गुरु और सत्संग

साधना की सफलता और साध्य की प्राप्ति के लिए सद्गुरु का सत्संग प्रेरणा का स्रोत रहता है। गुरु का उपदेश पापनाशक, कल्याणकारक, शान्ति और आत्मशुद्धि करने वाला होता है।[29] उसके लिए श्रमण और वैदिक साहित्य में श्रमण आचार्यों, बुद्ध, पूज्य, धर्माचार्य, उपाध्याय, भन्ते, भदन्त, सद्गुरु, गुरु आदि शब्दों का पर्याप्त प्रयोग हुआ है। जैनाचार्यो ने अर्हन्त और सिद्ध को भी गुरु माना है और विविध प्रकार से गुरु-भक्ति प्रदर्शित की है। इहलोक और परलोक में जीवों को जो कोई भी कल्याणकारी उपदेश प्राप्त होते हैं वे सब गुरुजनों के प्रति विनय से ही होते हैं।[30] इसलिए उत्तराध्ययन में गुरु और शिष्यों के पारस्परिक कर्तव्यों का विवचेन किया गया है।[31] इसी सन्दर्भ में सुपात्र और कुपात्र के बीच जैन तथा वैदिक साहित्य भेदक रेखा भी खींची गई है।

जैन साधक मुनिरामसिंह [32] और आनंदतिलक[33] ने गुरु की महत्ता स्वीकार की है और कहा है कि गुरु की कृपा से ही व्यक्ति मिथ्यात्व, रागादि के बंधन से मुक्त होकर भेदविज्ञान द्वारा अपनी आत्मा के मूल विशुद्ध रूप को जान पाता है। इसलिए उन्होंने गुरु की वन्दना की है। आनंदतिलक भी गुरु को जिनवर, सिद्ध, शिव और स्व-पर का भेद दर्शाने वाला मानते हैं। जैन साधकों के ही समान कबीर ने भी गुरु को ब्रह्म (गोविन्द) से भी श्रेष्ठ माना है। उसी की कृपा से गोविन्द के दर्शन संभव हैं।[34] रागादिक विकारों को दूर कर आत्मा ज्ञान से तभी प्रकाशित होती है जब गुरु की प्राप्ति हो जाती है।[35] उनका उपदेश संशयहारक और पथप्रदर्शक रहता है।[36] गुरु के अनुग्रह एवं कृपा दृष्टि से शिष्य का जीवन सफल हो जाता है। सद्गुरु स्वर्णकार की भांति शिष्य के मन से दोष और दुर्गुणों को दूर कर तप्त स्वर्ण की भांति खरा और निर्मल बना देता है।[37] सूफी कवि जायसी के मन में पीर (गुरु) के प्रति श्रद्धा द्रष्टव्य है। वह उनका प्रेम का दीपक है।[38] हीरामन तोता स्वयं गुरु रूप है[39] और संसार को उसने शिष्य बना लिया है।[40] उनका विश्वास है कि गुरु साधक के हृदय में विरह की चिनगारी प्रक्षिप्त कर देता है और सच्चा साधक शिष्य गुरु की दी हुई उस वस्तु को सुलगा देता है।[41] जायसी के भावमूलक रहस्यवाद का प्राणभूततत्व प्रेम है और यह प्रेम पीर की महान देन है। पद्मावत के स्तुतिखंड में उन्होंने लिखा है-

"सैयद असरफ पीर पिराया। जेहि मोहि पंथ दीनह उंजियारा।
लेसा हिए प्रेम कर दीया। उठी जौति भा निरमल हीया।।[42]

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सूर की गोपियां तो बिना गुरु के योग सीख ही नहीं सकीं। वे उद्धव से मथुरा ले जाने के लिए कहती हैं जहाँ जाकर वे गुरु श्याम से योग का पाठ ग्रहण कर सकें।[43] भक्ति-धर्म में सूर ने गुरु की आवश्यकता अनिवार्य बतलाई है और उसका उच्च स्थान माना है। सद्गुरु का उपदेश ही हृदय में धारण करना चाहिए क्योंकि वह सकल भ्रम का नाशक होता है-"सद्गुरु को उपदेश हृदय धरि, जिन भ्रम सकल निवारयौ।।[44]

सूर गुरु महिमा का प्रतिपादन करते हुए करते हैं कि हरि और गुरु एक ही स्वरूप हैं और गुरु के प्रसन्न होने से हरि प्रसन्न होते हैं। गुरु के बिना सच्ची कृपा करने वाला कौन है? गुरु भवसागर में डूबते हुए को बचाने वाला और सत्पथ का दीपक है।[45] सहजोबाई भी कबीर के समान गुरु को भगवान से भी बड़ा मानती है।[46] दादू लौकिक गुरु को उपलक्षण मात्र मानकर असली गुरु भगवान को मानते हैं।[47] नानक भी कबीर के समान गुरु की ही बलिहारी मानते हैं, जिसने ईश्वर को दिखा दिया अन्यथा गोविन्द का मिलना कठिन था।[48] सुन्दरदास भी "गुरुदेव बिना नहीं मारग सूझय" कहकर इसी तथ्य को प्रकट करते हैं।[49] तुलसी ने भी मोहभ्रम दूर होने और राम के रहस्य को प्राप्त करने में गुरु को ही कारण माना है। रामचरितमानस के प्रारम्भ में ही गुरु-वन्दना करके उसे मनुष्य के रूप में करुणासिन्धु भगवान माना है। गुरु का उपदेश अज्ञान के अंधकार को दूर करने के लिए अनेक सूर्यों के समान है-

बंदऊं गुरुपद कंज कृपासिन्धु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु वचन रवि कर निकर।।[50]

कबीर के समान ही तुलसी ने भी संसार को पार करने के लिए गुरु की स्थिति अनिवार्य मानी है। साक्षात् ब्रह्मा और विष्णु के समान व्यक्तित्व भी, गुरु के बिना संसार से मुक्त नहीं हो सकता।[51] सद्गुरु ही एक ऐसा दृढ़ कर्णधार है जो जीव के दुर्लभ कामों को भी सुलभ कर देता है-

करनधार सद्गुरु दृढ़ नावा, दुर्लभ साज सुलभ करि पावा।[52]

मध्यकालीन हिन्दी जैन कवियों ने भी गुरु को इससे कम महत्त्व नहीं दिया। उन्होंने तो गुरु को वही स्थान दिया है जो अर्हन्त को दिया है। पंच परमेष्ठियों में सिद्ध को देव माना है और शेष चारों को गुरु रूप स्वीकारा है। ये सभी 'दुरित हरन दुखदारिद दोन' के कारण हैं।[53] कबीरादि के समान कुशल लाभ ने शाश्वत सुख की उपलब्धि को गुरु का प्रसाद कहा है- "श्री गुरु पाय प्रसाद सदा सुख संपजइ रे"।[54] रूपचन्द ने भी यही माना। बनारसीदास ने सद्गुरु के उपदेश को मेघ की उपमा दी है जो सब जीवों का हितकारी है।[55] मिथ्यात्वी और अज्ञानी उसे ग्रहण नहीं करते, पर सम्यग्दृष्टि जीव उसका आश्रय लेकर भव से पार हो जाते हैं।[56] एक अन्यत्र स्थल पर बनारसीदास ने उसे "संसार सागर तरन तारन गुरु जहाज विशेखिये" कहा है।[57]

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

मीरा ने 'सगुरा' और 'निगुरा' के महत्त्व को दृष्टि में रखते हुए कहा है कि सगुरा को अमृत की प्राप्ति होती है और निगुरा को सहज जल भी पिपासा की तृप्ति के लिए उपलब्ध नहीं होता। सद्गुरु के मिलन से ही परमात्मा की प्राप्ति होती है।[58] रूपचन्द का कहना है कि सद्गुरु की प्राप्ति बड़े सौभाग्य से होती है, इसलिए वे उसकी प्राप्ति के लिए अपने इष्ट से अभ्यर्थना करते हैं।[59] द्यानतराय को "जो तजै पियै की आसा, द्यानत पावै सिववासा। यह सद्गुरु सीख बताई, काँहू विरलै के जिय जाई" के रूप में अपने सद्गुरु से पथदर्शन मिला।[60]

सन्तों ने गुरु की महिमा को दो प्रकार से व्यक्त किया है- सामान्य गुरु का महत्त्व और किसी विशिष्ट व्यक्ति का महत्त्व। कबीर और नानक ने द्वितीय प्रकार को भी स्वीकार किया है। जैन सन्तों ने भी इन दोनों प्रकारों को अपनाया है। अर्हन्त आदि सद्गुरुओं का तो महत्त्वगान प्रायः सभी जैनाचार्यों ने किया है, पर कुशल लाभ जैसे कुछ भक्तों ने अपने लौकिक गुरुओं की भी आराधना की है।[61]

गुरु के इस महत्त्व को समझकर ही साधक कवियों ने गुरु के सत्संग को प्राप्त करने की भावना व्यक्त की है। परमात्मा से साक्षात्कार कराने वाला ही सद्गुरु ही है।[62] सत्संग का प्रभाव ऐसा होता है कि वह मजीठ के समान दूसरों को अपने रंग में रंग लेता है।[63] काग भी हंस बन जाता है।[64] रैदास के जन्म-जन्म के पाश कट जाते हैं।[65] मीरा सत्संग पाकर ही हरि-चर्चा करना चाहती है।[66] सत्संग से दुष्ट भी वैसे ही सुधर जाते हैं जैसे पारस के स्पर्श से कुधातु लोहा भी स्वर्ण बन जाता है।[67] इसलिए सूर दुष्ट जनों की संगति से दूर रहने के लिए प्रेरित करते हैं।[68]

मध्यकालीन हिन्दी जैन कवियों ने भी सत्संग का ऐसा ही महत्त्व दिखाया है। बनारसीदास ने तुलसी के समान सत्संगति के लाभ गिनाये हैं-

कुमति निकद होय महा मोह मंद होय,
जनमगै सुयश विवेक जगै हियसों।
नीति को दिव्य होय विनैको बढाव होय,
उपजे उछाह ज्यों प्रधान पद लियेसों।।
धर्म को प्रकाश होय दुर्गति को नाश होय,
बरते समाधि ज्यों पीयूष रस-पिये सों।
तोष परि पूर होय, दोष दृष्टि दूर होय,
एते गुन होहिं सह संगति के किये सौं।।[69]

द्यानतराय कबीर के समान उन्हें कृतकृत्य मानते हैं जिन्हें सत्संगति प्राप्त हो गयी है।[70] भूधरमल सत्संगति को दुर्लभ मानकर नरभव को सफल बनाना चाहते हैं-

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रभु गुन गाय रे, यह ओसर फेर न पाय रे।
मानुष भव जोग दुहेला, दुर्लभ सतसंगति मेला।
सब बात भली बन आई, अरहन्त भजौ रे भाई।।[71]

दरिया ने सत्संगति को मजीठ के समान बताया और नवल राम ने उसे चन्द्रकान्तमणि जैसा बताया है। कवि ने और भी दृष्टान्त देकर सत्संगति को सुखदायी कहा है-

सत संगति जग में सुखदायी है।
देव रहित दूषण गुरु सांचौ, धर्म्म दया निश्चै चितलाई।।
सुक मेना संगतिनर की करि, अति परवीन बचनता पाई।
चन्द्र कांति मनि प्रकट उपल सौ, जल ससि देखि झरत सरसाई।।
लट घट पलटि होत षट पद सी, जिन कौ साथ भ्रमर को थाई।
विकसत कमल निरखि दिनकर कों, लोक कनक होय पारस छाई।।
बोझ तिरै संजोग नाव कै, नाग दमनि लखि नाग न खोई।
पावक तेज प्रचंड महाबल, जल मरता सीतल हो जाई।।
संग प्रताप भुयंगम जै है, चंदन शीतल तरल पठाई।
इत्यादिक ये बात धणेरी, कौलो ताहिं कहौ जु बढ़ाई।।[72]

इसी प्रकार कविवर छत्रपति ने भी संगति का माहात्म्य दिखाते हुए उसके तीन भेद किये हैं- उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य।[73]

इस प्रकार मध्यकालीन हिन्दी जैन साधकों ने विभिन्न उपमेयों के आधार पर सद्गुरु और उनकी सत्संगति का सुन्दर चित्रण किया है। ये उपमेय एक दूसरे को प्रभावित करते हुए दिखाई देते हैं जो निःसन्देह सत्संगति का प्रभाव है। यहाँ यह द्रष्टव्य है कि जैनेतर कवियों ने सत्संगति के माध्यम से दर्शन की बात अधिक नहीं की, जबकि जैन कवियों ने उसे दर्शन मिश्रित रूप में अभिव्यक्त किया है।

सन्दर्भः-

1. बनारसी विलास, पंचपदविधान
2. हिन्दी पद संग्रह, रूपचन्द, पृ. 48
3. हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि, पृ. 117
4. बनारसी विलास, पृ. 24
5. हिन्दी पद संग्रह, पृ. 48
6. बनारसी विलास, भाषा, मु. पृ. 20,27

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

7. वही, ज्ञान पच्चीसी, 13, पृ. 148
8. वही, शिव पच्चीसी, 6, पृ. 150
9. वहीं, शारदाष्टक, 3, पृ. 166
10. नाटक समयसार, जीवद्वार, 3
11. वही, सत्यसाधकद्वार, 6, पृ. 338
12. नाटक समयसार, 16, पृ. 38
13. जिनराजसूरि गीत, 9 ....
14. पदसंग्रह 946 ते. मंदिर, जयपुर
15. हिन्दी पद संग्रह, पृ. 99
16. परमार्थ जकडी संग्रह, गीत पर
17. गुरु पूजा, 6, वृ. जि. सं. पृ. 201
18. ज्ञानचिन्तामणि, 35
19. सुगुरु सीष, गु.नं. 161, दी.व.मं,
20. अपभ्रंश और हिन्दी में जैन रहस्यवाद, पृ. 97
21. मनकरहारास
22. आनंदघन महोत्तरी,.........
23. मधु बिन्दुक की चौपाई 58, ब्रह्मविलास
24. ब्रह्मविलास, पृ. 270
25. गीत परमार्थी हि.जै.भ.का.क., पृ. 171
26. द्यानत पद संग्रह, पृ. 10
27. हिन्दी पद संग्रह, पृ. 126-127, 133
28. भूधर विलास, पृ. 4
29. उत्तराध्ययन, 127
30. वसुनन्दि श्रावकाचार, 339
31. उत्तराध्ययन, प्रथम अध्ययन
32. योगसार, 41, पृ. 380
33. आणंदा, 36
34. संतवाणीसंग्रह, भाग-1, पृ. 2

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

35. कबीर ग्रन्थावली, पृ. 1

36. ससै खाया सकल जग, ससा किनहूं न खद्ध, वही, पृ. 2-3

37. वही, पृ. 4

38. जायसी ग्रन्थमाला, पृ. 7

39. गुरु सुआ जेइ पंथ देखावा। बिनु गुरु जगत को निरगुन पावा।।- पद्मावत

40. गुरु होइ आप, कीन्ह उचेला-जायसी ग्रन्थावली, पृ. 33

41. गुरु विरह चिनगी जो मेला। जो सुलगाइ लेइ सो चेला।।- वही, पृ. 51

42. जायसी ग्रंथावली,स्तुतिखण्ड, पृ. 7

43. जोग विधि मधुबन सिखिहैं जाइ। बिनु गुरु निकट संदेसनि कैसे, अवगाह्यौ जाइ।- सूरसागर (सभा), पद 4328

44. वही, पद 336

45. सूरसागर, पद 416, 417; सूर और उनका साहित्य।

46. परमेसुर से गुरु बड़े गावत वेद पुरान-संतसुधासार, पत्र 182

47. आचार्य क्षितिमोहन सेन-दादू और उनकी धर्मसाधना, पाटल सन्त विशेषांक, भाग 1, पृ. 112

48. बलिहारी गुरु आपणों द्यौ हांड़ी के बार। जिनि मानिषतें देवता, करत न लागी बार।।- गुरु ग्रंथ साहिब, म 1, आसादीवार, पृ. 1

49. सुन्दरदास ग्रंथावली, प्रथम खण्ड, पृ. 8

50. रामचरितमानस, बालकाण्ड, 1-5

51. गुरु बिनु भवनिधि तरइ न कोई जो विरंचि संकर सम होई। बिन गुरु होहि कि ज्ञान ज्ञान कि होइ विराग विनु। रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड, 93

52. वही, उत्तरकाण्ड, 4314

53. बनारसीविलास, पंचपद विधान, 1-10, पृ. 162-163

54. हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि, पृ. 117

55. ज्यौं वरषै वरषा समै, मेघ अखंडित धार। त्यौं सद्गुरु वानी खिरै, जगत जीव हितकार।।- नाटक समयसार, 6, पृ. 338

56. वही, साध्य साधक द्वार, 15-16, पृ. 342-3

57. बनारसी विलास, भाषासूक्त मुक्तावली, 14, पृ. 24

58. सद्गुरु मिलिया सुंछपिछानौ ऐसा ब्रह्म मैं पाती। सगुरा सूरा अमृत पीवे निगुरा प्यारस जाती। मगन

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

भया मेरा मन सुख में गोविन्द का गुणगाती। मीना कहै इक आस आपकी औरां सूं सकुचाती।।- सन्त वाणी संग्रह, भाग 2, पृ. 69

59. अब मौहि सद्गुरु कहि समझायौ, तौ सौ प्रभू बड़ै भागनि पायो। रूपचन्द नटु विनवै तौही, अब दयाल पूरौ दे मोही।।- हिन्दी पद संग्रह, पृ. 49

60. वही, पृ. 127, तुलनार्थ देखिये। मनवचनकाय जोग थिर करके त्यागो विषय कषाइ। द्यानत स्वर्ग मोक्ष सुखदाई सतगुरु सीख बताई।। वही, पृ. 133

61. हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि, पृ. 117

62. भाई कोई सतगुरु सत कहावै, नैनन अलख लखावै- कबीर; भक्ति काव्य में रहस्यवाद, पृ. 146

63. दरिया संगम साधु की, सहजै पलटै अंग। जैसे संग मजीठ के कपड़ा होय सुरंग।- दरिया 8, संत वाणी संग्रह, भाग 1, पृ. 129

64. सहजो संगत साध की काग हंस हो जाय। सहजोबाई, वही, पृ. 158

65. कह रैदास मिलैं निजदास, जनम जनम के काटे पास- रैदास वानी, पृ. 32

66. तज कुसंग सतसंग बैठ नित, हरि चर्चा गुण लीजौ- सन्तवाणी संग्रह, भाग 2, पृ. 77

67. जलचर थलचर नभचर नाना, जे जड चेतन जीव जहाना। मीत कीरति गति भूति भलाई, जग जेहिं जतन जहां जेहिं पाई। सौ जानव सतसंग प्रभाऊ, लौकहुं वेद न आन उपाऊ। बिनु सतसंग विवेक न होई, राम कृपा बिनु सुलभ न सोई। सतसंगति मुद मंगलमूला, सोई फल सिधि सब साधन फूला। सठ सुधरहिं सतसंगति पाई, पारस परस कुधात सुहाई।- तुलसीदास-रामचरितमानस, बालकाण्ड 2-5

68. तजौ मन हरि विमुखन को संग। जिनके संग कुमति उपजत है परत भजन में।

69. बनारसी विलास, भाषा मुक्तावली, पृ. 50

70. हिन्दी पद संग्रह, पृ. 136

71. वही, पृ. 155

72. वही, पृ. 158-186

73. मन मोदन पंचशती, 147-8, पृ. 70-71

-धर्मपत्नी श्री (डॉ.) भागचन्द जैन 'भास्कर', सदर बाजार, नागपुर (महा.)

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org